R.N.I. No. : DELBIL / 2001/4685 Postal regn. No. : A.L.G. / 29 / 2021-23
मूल्य-7 रुपये, वर्ष-23, अङ्क-7 जुलाई 2023 (1)

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (रजि.), अलीगढ़ (उ०प्र०) का
मासिक मुख समाचार पत्र

# मङ्गलायतन

## तीर्थधाम चिदायतन

15 नवम्बर से 16 नवम्बर 2023 तक होने जा रहा है, भव्य वेदी शिलान्यास चिदोत्सव।

भूतपूर्व मंगलार्थियों के अनुभव सुनते हुए वर्तमान मंगलार्थी छात्र!

तीर्थधाम मंगलायतन के छात्र 'मंगलार्थी सोहम जैन' ने प्राप्त किया तृतीय स्थान...

## जिनधर्म प्रभावक विभूतियों का मरणोपरान्त सम्मान

# मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ–कुन्दकुन्द–कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट (रजि.), अलीगढ़ (उ.प्र) का

**मासिक मुखपत्र**

वर्ष – 23, अङ्क – 7 (वी.नि.सं 2549; वि.स. 2080) जुलाई – 2023


**रक्षाबन्धन विशेष**

## जय–जय मुनिवर विष्णुकुमार

**दुष्ट बली जब कुमति उपाई, संघ घेर नरमेघ रचाई।**

**मच गया गजपुर हाहा कार ।।**

संघ उपसर्ग की खबर सु–पाकर, पुष्पदन्त मुनि अति घबराकर।

आकर तुमसे करी पुकार........।।1।।

गुरु तुम वीतरागता धारी, विक्रिया ऋद्धि प्रगट भई भारी।

उमड़ा वात्सल्य सुखकार........।।2।।

बौने द्विज का वेष बनाया, चमत्कार तप का दिखलाया।

पड़ गया नृप बली चरण मंझार.....।।3।।

मुनियों का उपसर्ग मिटाया, सबको दया धर्म सिखलाया।

हुआ जिनधर्म का जय जयकार......।।4।।

क्षमा भाव धरि बलि को छोड़ा, उसने हिंसा से मुख मोड़ा।

धारा जैन धर्म सुखकार...........।।5।।

सर्व जनों में आनंद छाया, रक्षाबंधन पर्व मनाया।

हर्षित होय दिया आहार.........।।6।।

**संस्थापक सम्पादक**
स्व. पण्डित कैलाशचन्द्र जैन, अलीगढ़
स्व. श्री पवन जैन, अलीगढ़

**सम्पादक**
डॉ. जयन्तीलाल जैन,
मंङ्गलायतन विश्वविद्यालय

**सह सम्पादक**
पंडित सुधीर जैन शास्त्री
पंडित अभिषेक शास्त्री

**सम्पादक मंडल**
ब्रह्मचारी पं. ब्रजपाल शाह, वढ़वाण
बा. ब्रह्मचारी हेमन्तभाई गाँधी, सोनगढ़
डॉ. राकेश जैन शास्त्री, नागपुर
श्रीमती बीना जैन, देहरादून

**सम्पादकीय सलाहकार**
पं. विमलदादा झाँझरी, उज्जैन (सलाहकार)
श्री चिरंजीलाल जैन, भावनगर
श्री प्रवीणचंद्र पी. वोरा, देवलाली
श्री बसन्तभाई एम. दोशी, मुम्बई
श्री श्रेयस् पी. राजा, नैरोबी
श्री विजेन वी. शाह, लन्दन

**मार्गदर्शन**
श्री डॉ. किरीटभाई गोसलिया, अमेरिका
पण्डित अशोक लुहाड़िया, मङ्गलायतन

**निवेदन**

अगर आपको यह पत्रिका लगातार प्राप्त हो रही है तो कृपया सूचित करें। जिससे पत्रिका आपको लगातार मिलती रहे। अगर आप हमें सूचित नहीं करते हैं तो हम समझेंगे कि आपको पत्रिका प्राप्त नहीं हो रही है। अतः आगे पत्रिका नहीं भेजी जायेगी।

**सम्पर्कसूत्र**

पण्डित अभिषेक शास्त्री, मंङ्गलायतन
9997996346 (Whatsapp)
Email: info@mangalaytan.com

**शुल्क :**

**एक प्रति : 07 रुपये**

**आजीवन (15 वर्ष) : 1000 रुपये**

# क्या - कहाँ

| | |
|---|---|
| **श्रीसमयसारनाटक** | **6** |
| **वीरशासनविशेषप्रवचन** | **10** |
| **विद्वानकक्ष** | **16** |
| **आचार्यपरिचय** | **18** |
| **ऐतिहासिककहानी** | **20** |
| **आलेखकक्ष** | **22** |
| **काव्यकक्ष** | **25** |
| **प्रतियोगीता** | **26** |
| **भक्तामरजी** | **27** |
| **शोधलेख** | **28** |
| **समाचारदर्शन** | **29** |
| **स्वानुभूतिदर्शन** | **32** |

# श्री समयसार नाटक पर पूज्य गुरुदेवश्री कानजी स्वामी के धारावाही प्रवचन

भगवान आत्मा मन-वचन-काय की क्रिया से तो पहले ही भिन्न है, विकल्प से पार है- ऐसी दृष्टि नहीं करे, वहाँ तक मिथ्यादृष्टि पुण्य की क्रिया कर करके मर जाये तो भी वह निगोद के पंथ में है।

**श्रोता:-** पुण्य की क्रिया करे, फिर भी निगोद में चला जाता है ?

**पूज्य गुरुदेवश्री:-** पुण्य की क्रिया राग है और स्वभाव तो परम पवित्र है, उसके साथ राग को मिलाता है, यह मिथ्यात्व है। यह मिथ्यात्व ही निगोद का बीज है जो राग की क्रिया मेरी है ऐसा पक्षपात करता है, वह मिथ्यादृष्टि है और मिथ्यात्व का फल निगोद है।

**पूज्य गुरुदेवश्री:-** अज्ञान में सब खाली ही है। स्वप्न में मिठाई खायें, परन्तु पेट तो।

**श्रोता :-** बहुत क्रिया करने पर भी खाली ही रहता है ?

**पूज्य गुरुदेवश्री:-** खाली ही रहता है इसकी तरह है। एक लकड़हारे को बहुत भूख लगी थी और स्वप्न में गर्म-गर्म मिठाई खाई, परन्तु जहाँ जगा कि वहाँ तो पेट खाली ही था उसीप्रकार अज्ञान में बहुत राग की क्रिया करे, उसको लगता है कि मेरा दुःख मिटता है और शान्ति होती है ऐसा मिथ्याभ्रम होता है परन्तु जहाँ ज्ञान में जागृत होकर देखता है तो वहाँ ख्याल आता है कि अरे! यह राग की क्रिया मेरी नहीं है, इससे मेरी अशान्ति नहीं मिटेगी। मैं राग की क्रिया से पार हूँ।

**अनुभौ रस भीनौ -** निःशंक निज स्वभाव को ग्रहण करने पर अनुभव में मग्न हो जाता है। राग से भिन्न स्वभाव को देखते ही उसके ज्ञानानन्द रस में मग्न हो जाता है। **कीनौ विवहार दृष्टि निहचे मैं राखी है** - अर्थात् जहाँ तक पूर्ण वीतराग न हो, वहाँ तक ज्ञानी को विकल्प होते है, वह व्यवहार है- यह होता है; परन्तु उसने दृष्टि निश्चय में स्थापित की हुई है, श्रद्धा तो निश्चय की है। व्यवहार में होने पर भी दृष्टि निश्चय स्वभाव में गई है। शुभभाव है तो भी दृष्टि निश्चय स्वभाव पर गई है, वह ज्ञानी है। मेरे स्वभाव में अशुभ और शुभ दोनों भाव नहीं है, मैं तो शुद्धस्वभावी हूँ ऐसी निश्चय दृष्टि ज्ञानी को सदा वर्त रही है। इस कारण शुभाशुभभाव होने पर भी वह मेरे हैं - ऐसी दृष्टि ज्ञानी को नहीं होती है।

**भरम की डोरी तोरी अर्थात् ज्ञानी ने भ्रम-** मिथ्यात्व की डोरी को तोड़ दिया है। इस कारण ज्ञानी को मिथ्यात्व कर्म का बंधन भी नहीं होता है। **धरम को भयौ धौरी** - ज्ञानी आत्मा के धर्म का धारक हुआ है। जैसे जोतने योग्य बैल माल को धरकर आगे ले जाता है; उसीप्रकार धर्म के धारी ज्ञानी अपने धर्म को धरकर आगे बढ़ते हैं जो रागरहित निर्मल श्रद्धा -ज्ञान को धारण करते हैं, वे धर्म के धारक धर्मी हैं।

**परम सौं प्रीति जोरी परम** अर्थात् परमात्मा (ज्ञानी को) अपने परमात्म स्वभाव की प्रीति हुई है। मुक्ति की लगन लगी है और कर्म की प्रीति टूट गई है। इसकारण वे उत्पन्न होनेवाले रागादि विकल्पों के साक्षी हैं, कर्त्ता नहीं धर्मी रागादिक को अपने नहीं मानते हैं। १ उनको तो मुक्ति की प्रीति लगी है। पुण्य-पाप होते हैं; परन्तु वे उसके साक्षी हैं, कर्ता नहीं; वे ज्ञानी है।

एक-एक श्लोक देखो तो सही! समुद्र भरा है। इसे समझना ही एकमात्र करने योग्य कार्य है, अन्य सब तो पाप के पोटले हैं।

जैसे कन्या की सगाई होते ही कैसा अभिप्राय पलट जाता है कि यह पिता का घर है, मेरा नहीं जिसके साथ विवाह निश्चित हुआ है, वह वर और घर मेरा है सगाई दो वर्ष रहे, वहाँ तक रहती पिता के घर में ही है- बाहर में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है; परन्तु मन में तो पति और उसका घर ही अपना है ऐसा घोलन है उसीप्रकार धर्मों की सगाई स्वभाव के साथ हो गई है इसकारण वह राग में खड़ा होने पर भी उसको राग में एकत्व नहीं होता, उसको तो स्वभाव का ही घोलन है। वह पुण्य पाप का स्वामी नहीं होता, वह तो अपने चैतन्य स्वभाव का ही स्वामी होकर रहता है। राग के अभाव होने में समय लगता है वहाँ तक राग रहता है; परन्तु दृष्टि तो चैतन्य स्वभाव पर ही स्थापित रहती है। इसप्रकार दृष्टि फिरने बदलने पर संयोग तो ज्यों के त्यों होने पर भी परिवार, धनादि किसी में भी मेरा अपनापन नहीं होता। जो मेरा है, वह मुझसे भिन्न नहीं पड़ सकता। मेरा तो ज्ञानस्वभाव है, वही मेरा है, अन्य कोई मेरा नहीं है।

**भेदविज्ञानी जीव लोगों को कर्म का कर्त्ता दिखता है पर वह वास्तव में अकर्त्ता है:-**

**जैसो जो दरब ताके तैसो गुन परजाय,**
**ताही सों मिलत पै मिलै न काहु आनसौं।**
**जीव वस्तु चेतन करम जड़ जातिभेद,**
**अमिल मिलाप ज्यौं नितंब जुरै कानसौं।।**
**ऐसौं सुविवेक जाकै हिरदै प्रगट भयौ,**
**ताकौ भ्रम गयौ ज्यौं तिमिर भागै भानसौं।**
**सोई जीव करमकौ करता सौ दीसै पै,**
**अकरता कह्यो है सुद्धताके परमानसौ।।5।।**

**अर्थ:-** जो द्रव्य जैसा है उसके वैसे ही गुण पर्याय होते हैं और वे उसी से मिलते हैं अन्य किसी से नहीं मिलते। चैतन्य जीव और जड़ कर्म में जातिभेद है सो इनका

नितम्ब और कान के समान अमिलाप है, ऐसा सम्यग्ज्ञान जिसके हृदय में जाग्रत होता है उसका मिथ्यात्व सूर्य के उदय में अन्धकार के समान दूर हो जाता है। वह लोगों को कर्म का कर्ता दिखता है परन्तु राग-द्वेष आदि रहित शुद्ध होने से उसे आगम में अकर्ता कहा है ।।15।।

## काव्य 5 पर प्रवचन

अब कहते हैं कि लोगों को भेदविज्ञानी जीव कर्म का कर्ता दिखता है परन्तु वह वास्तव मैं अकर्ता है। ज्ञानी भी सबके साथ रहता होवे, खाता होवे, पीता होवे, व्यापार करता होवे; परन्तु अन्दर में सबसे निराला रहता है, वह किसी को नहीं दिखता। इसकारण अज्ञानी को धर्मी कर्म के कर्त्ता दिखते हैं; परन्तु वे वास्तव में कर्ता नहीं है।

यहाँ मोती और कान की अर्थात् कान और उसमें पहने हुए बुकिया (गहने) की भिन्नता बताकर दो द्रव्यों की भिन्नता बताई है। बहिनें गहने पहनती हैं न कल सेठ का पत्र आया है, उसमें लिखा है कि घर में माँ साथ अकेले थे और चोर आकर पचास-साठ हजार के गहने ले गये, किन्तु माताजी ने आपके वचनानुसार शान्ति और समाधान रखा है। जो वस्तु जहाँ जाने की है, जैसे रहने की है, वैसे रहती है ऐसा जानकर आकुलता और आर्तध्यान नहीं किया है। जड़ के परमाणु किसी के रखने से रहें ऐसा नहीं है। वे जहाँ जानेवाले हैं, वहाँ जायेंगे: उनमें फेरफार करने में कोई समर्थ नहीं है। इतना भरोसा तो प्रत्येक मुमुक्षु को होना चाहिए। इतना भी भरोसा नहीं होते तो आर्तध्यान करके पाप लगा परन्तु (पर) वस्तु में कोई फेरफार नहीं होगा। दृष्टि में पर के प्रति ममत्व होने से इसकी दुःख होता है कि अरे रे मेरी वस्तु चली जाती है; परन्तु भाई। वह तेरी थी ही नहीं तू दृष्टि में से पर का ममत्व छोड़ दे तो तुझको दुःख नहीं होगा तू तो ज्ञान और आनन्द का घर है। कोई उसमें से कुछ नहीं लूट सकता है। अन्य परवस्तु तो रहना हो तो रहती है और जाना हो तो जाती है। उसको रखने के लिए तीनकाल में कोई समर्थ नहीं है।

**जीव वस्तु चेतन करम जड़ जातिभेद,** जैसे कान के साथ लौंग (कान का गहना) पहना हो, वह लटकता हो, परन्तु उसका मोती और कान एक नहीं हो जाते भिन्न वस्तुयें भिन्न ही रहती है उसीप्रकार जीव और कर्म की जाति भिन्न है, वह कभी एक नहीं होती **ऐसौं सुविवेक जाकै हिरदै प्रकट भयौ,** जो द्रव्य जैसा है, वैसे ही उसके गुण पर्याय होते हैं। वे गुण- पर्याय अन्य द्रव्य में नहीं मिलते। भगवान आत्मा एक जीवद्रव्य है, ज्ञान और आनन्द उसके गुण हैं और वैसी ही निर्मल दशा वह उसकी पर्याय है मलिन पर्याय, वह उसकी पर्याय नहीं है। रागादि की मलिन पर्याय और पुण्य पाप की क्रिया, वह आत्मा की क्रिया नहीं है। ऐसा विवेक जिसको प्रकट होता है, उसका मिथ्या अंधकार शीघ्र नष्ट हो जाता है।

जो द्रव्य के गुण और पर्याय होते हैं, उनका मेल उसी द्रव्य से खाता है, अन्य द्रव्य के साथ उनका मेल नहीं खाता। भगवान आत्मा जानने-देखने के गुणवाला द्रव्य है, तो उसकी पर्याय जानने देखने रूप हो वही उसकी पर्याय है, पुण्य पाप के नामवाली पर्याय के साथ उसका मेल नहीं खाता। जैसे कान और मोती नहीं मिलते हैं; उसीप्रकार आत्मा की निर्मल पर्याय और मलिनरूप रागादि पर्याय दोनों मिलती नहीं है। दोनों की जाति में अन्तर है। शरीर की जाति तो अलग है ही; परन्तु राग की पर्याय के साथ भी आत्मा की निर्मल पर्याय का मेल नहीं खाता है।

भगवान आत्मा तो जानने-देखनेवाला चेतन है और पुण्य-पाप कर्म तो अचेतन हैं, वे आत्मा को जाति के नहीं हैं। अहो ! पण्डित बनारसीदासजी ने एक-एक पद मक्खन जैसा बनाया है।

आत्मा तो चेतन है; तो चेतन में राग-द्वेष आयेंगे? व्यवहार रत्नत्रय का विकल्प आता है, वह चेतन नहीं है। अब जीव का और उसका (ही) जातिभेद है तो अन्य कार्यों का कर्त्ता ती आत्मा कैसे हो सकता है? निहालचन्द भाई सोगानी की पुस्तक (द्रव्यदृष्टि प्रकाश) में लिखा है कि पंगु समझकर शरीर को टिकाने के लिए दो समय आहार दो मैं तो पंगु हूँ स्वयं का कलकत्ता में कपड़े का व्यापार चलता था, तो भी ऐसा कहते हैं

**अमिल मिलाप ज्यौं नितंब जुरै कानसौं** जैसे कान का और मोतियों का मिलाप नहीं होता उसीप्रकार चेतन और अचेतन का मिलाप नहीं होता। जड़ और चैतन्य के जातिभेद होने से वे कभी एक नहीं होते। ऐसी वस्तुस्थिति है भाई इसको समझ कर इसका ज्ञान कर। इसका ध्यान कर अन्य सब क्रियाकांड हो परन्तु आत्मा उसका कर्त्ता नहीं है।

जिसके हृदय में ऐसा सुविवेक प्रकट हुआ है कि चैतन्यस्वभाव और राग के मेल नहीं है, अमेल है; दोनों में जातिभेद है ऐसा जाननेवाले ज्ञानी की दृष्टि में राग नहीं आता। जैसे सूर्योदय हो, वहाँ अंधकार नहीं रहता वैसे ही स्वभाव की दृष्टि हो, वहाँ राग की दृष्टि नहीं ठहर सकती। उसकी दृष्टि में राग आता ही नहीं भिन्न पड़ जाता है। विकल्प मेरा है और मेरा कर्तव्य है ऐसा भ्रम छूट जाता है। बाहर में तो ऐसा दिखता है कि यह (ज्ञानी) खाता है, पीता है, सोता है. परन्तु बापू अन्दर में इसे भेद पड़ गया है। समझ में आता है न -

**सम्यग्दृष्टि जीवड़ा करे कुटुंब प्रतिपाल।**
**अन्तर से न्यारा रहे, ज्यों धाय खिलाये बाल ।।**

सम्यग्दृष्टि परिवार का पालन भलीभाँति करता है, परन्तु अन्दर से प्रीति टूट गई है; कोई भी अपना भासित नहीं होता है जैसे धाय माता बालक को दूध पिलाती है, परन्तु उसको अपना नहीं मानती: उसीप्रकार ज्ञानी परिवार आदि को संभालता है, परन्तु अपना नहीं मानता। बाहर से ज्ञानी-अज्ञानी की क्रिया समान दिखने पर भी अन्दर में बहुत फेर पड़ गया है।

अरे धर्मी पूर्व पुण्योदय से राजपाट आदि की महान प्रवृत्ति में खड़ा दिखे, परन्तु उससे न्यारा है और अज्ञानी निवृत्ति लेकर नग्न मुनि हो गया हो तो भी (पर के साथ) एकता टूटी नहीं है जिसने राग को और आत्मा को एक माना है, उसकी धर्म के लिए की हुई प्रवृत्ति भी **अंधकारमय** हो है और जिसके अन्दर से राग छूटा है वह छह खण्ड के राज्य में दिखने पर भी उसमें उसकी एकता नहीं होती है।

**अकरता कह्यौ है सुद्धता के परमान सौं** ज्ञानी की दृष्टि राग-द्वेषादि से रहित शुद्ध होने से उसको आगम में अकर्ता कहा है। जहाँ ज्ञाता दृष्टा की शुद्धता की ज्योति प्रकट हुई है, वहाँ वह राग-द्वेष का कर्ता नहीं दिखता। राग-द्वेष करने पर भी कर्त्ता नहीं दिखता है ऐसा नहीं,किन्तु अज्ञानी को कर्त्ता दिखता है; क्योंकि अज्ञानी की पकड़ में अन्तर है। जैसे बिल्ली अपने बच्चे को ढ़ीले मुँह से पकड़ती है और चूहे को भींचकर पकड़ती है; इसीप्रकार ज्ञानी और अज्ञानी की पकड़ में अन्तर होता है।

धर्मी की दृष्टि में अपने शुद्धात्मा की पकड़ होने से वह राग को नहीं पकड़ता है। राग होता है, उसको जानता है। वहाँ अज्ञानी को ऐसा दिखता है कि ज्ञानी राग को करता है, परन्तु वस्तुतः ज्ञानी राग का कर्ता नहीं होने से अकर्त्ता है ऐसा आगम में कहा है। भगवान ने ज्ञानी को राग का अकर्ता देखा है और कहा है।

# वीरशासन जयंती पर गुरुदेव श्री कानजीस्वामी के विशेष उद्गार

यह योगसार शास्त्र है। योगीन्द्रदेव मुनि, दिगम्बर मुनि! आज से 700-800 वर्ष पहले हो गये हैं। उनका यह योगसार है। आज भगवान की दिव्यध्वनि का दिन है, उसमें यह गाथा ठीक आयी है। विरल, विरल बात है। भगवान महावीर परमात्मा को केवलज्ञान तो वैशाख शुक्ल 10 को हुआ था, परन्तु छियासठ दिन तक दिव्यध्वनि नहीं खिरी व्यवहार से ऐसा कहा जाता है कि वहाँ वाणी को झेलनेवाले गणधर की उपस्थिति का अभाव था । वस्तुतः तो वह वाणी खिरना ही नहीं थी। वह वाणी.... 66 दिन बाद इन्द्र को विचार हुआ कि यह वाणी क्यों नहीं खिरती? तो अवधिज्ञान से देखा कि इसमें कोई पात्र - गणधर आदि नहीं है, इस कारण वाणी नहीं खिरती। वाणी खिरने का तो योग था ही नहीं परन्तु शास्त्र में निमित्त से ऐसे कथन आते हैं।

गौतमस्वामी गणधर के योग्य थे। इन्द्र उनके पास ब्राह्मण का रूप धारण कर गया (और कहा कि) इसका कुछ अर्थ करो छह द्रव्य, नौ तत्त्व - सात क्या है? वह (गौतम) कहे भाई! मुझे नहीं आता; तुम्हारे गुरु के पास चलते हैं। उनमें छह द्रव्य के नाम नहीं होते हैं। फिर (वे) भगवान के पास आये। वहाँ तो उनकी योग्यता थी; क्षण में जहाँ (भगवान को) देखा, समवसरण देखा, वहाँ उनका मान गल गया। अन्दर गये वहाँ तो उन्हें आत्मज्ञान सम्यग्दर्शन हुआ और भगवान की वाणी खिरी। छियासठ दिन में दिव्यध्वनि विपुलाचल पर्वत पर **राजगृही** नगरी के बाहर वन में वहाँ भगवान की वाणी छियासठ दिन में खिरी और वह श्रावण कृष्ण एकम का योग का पहला दिन था। योग का पहला नववर्ष था । श्रावण कृष्ण एकम को (दिव्यध्वनि) खिरी। उस दिन गणधर ने वह वाणी झेली। वाणी खिरी उस दिन झेली; उस दिन गणधरदेव, भावश्रुत ज्ञानरूप गणधर परिणत (हुए)।

भगवान ने भावश्रुत कहा.... भगवान के पास भावश्रुत है नहीं; उनके पास तो केवलज्ञान है परन्तु केवलज्ञान कहा ऐसा शास्त्र में नहीं कहा। उन्होंने भावश्रुत का वर्णन किया। भाई! भगवान की वाणी में अकेले अर्थ आये, अर्थ आये; इस कारण भगवान ने भावश्रुत कहा ऐसा कहा जाता है। उसे गणधरदेव ने सूत्ररूप से गूँथा। अर्थरूप से भगवान की वाणी में आया, सूत्ररूप से गणधर ने गूँथा वह दिन आज है। वाणी खिरने का और बारह अंग चौदह पूर्व की रचना अन्तर्मुहूर्त में क्रमसः की अन्तर्मुहूर्त है न?

असंख्य समय है। गणधरदेव ने आज बारह अंग की रचना की। उन बारह अंग में सार में सार क्या कहा गया यह उसका कथन है।

योगसार.... । बारह अंग में संयोग, विकल्प और एक समय की अवस्था की उपेक्षा करके, त्रिकाल ज्ञायकस्वभाव की अपेक्षा करना ऐसा सार योगसाररूप से भगवान की वाणी में आया है। योगसार अर्थात् भगवान पूर्णानन्दस्वरूप ध्रुव, शाश्वत्, एकरूप, अनादि-अनन्त है। ऐसी चीज में एकाकार होकर, स्वरूप के आनन्द का वेदन होना, उसे योगसार कहते हैं। स्वरूप में एकाकार होकर आनन्द का अनुभव-वेदन करना, इसका नाम योगसार कहते हैं, जो कि मोक्ष का मार्ग है।

कहो, समझ में आया इसमें ?

कैसा योगसार ?

कहते हैं - तत्त्वज्ञानी विरले होते हैं। देखो! यह कहते हैं।

**विरला जाणहिं तत्तु बुह, विरला णिसुणहिं तत्तु।**
**विरला झायहिं तत्तु जिय, विरला धारहिं तत्तु।।66।।**

भगवान आत्मा सर्वज्ञ परमेश्वर ने जो आत्मज्ञानरूपी तत्त्व कहा, उसे अब विरले पण्डित ही आत्मतत्त्व को जानते हैं। विरले प्राणी। ज्ञान प्राप्त करना महा कठिन हैं, उसे थोड़े से प्राणी इस अनुपम तत्त्व का लाभ प्राप्त कर सकते हैं। **विरला जाणहिं तत्तु विरला तत्तु णिसुणहि।** सुननेवाले विरले हैं। आत्मज्ञान शुद्ध चिदानन्द की मूर्ति, उसमें अन्तर में एकाकार होना ऐसी बात सुननेवाले भी विरले हैं। समझ में आया ? कहनेवाले तो दुर्लभ हैं परन्तु सुननेवाले ऐसे दुर्लभ हैं।

जो आत्मा परमानन्दरूप ध्रुव सच्चिदानन्दस्वरूप, उसमें एकाग्र होना, वह मोक्ष का मार्ग है, दूसरा मार्ग नहीं। ऐसी बात सुननेवाले सभा में भी दुर्लभ है ऐसा कहते हैं। समझ में आया ? जिसे निमित्त रुचता हो, राग रुचता हो, व्यवहार रुचता हो, उसे यह बात सुनना कठिन है। सुनना मुश्किल है। नहीं, ऐसा नहीं होता, ऐसा नहीं होता, ऐसा नहीं होता - ऐसा कहते हैं। इसलिए कहते हैं कि **विरला तत्तु णिसुणहिं** भगवान आत्मा की त्रिकाल शुद्ध चैतन्यधातु में एकाकार होना ही मोक्ष का मार्ग है, यही योगसार, यही कल्याण का मार्ग है, यही मोक्ष का उपाय है। यह बात सुननेवाले भी जगत में बहुत विरले हैं। समझ में आया ? पुण्य की बातें, निमित्त की बातें, व्यवहार की बातें सुननेवाले थोक के थोक पड़े हैं ऐसा कहते हैं। परन्तु यह आत्मा शुद्ध अखण्डानन्द का कन्द है, ध्रुव अखण्डानन्द

प्रभु की अन्तर में दृष्टि करके रमना, ऐसा योग, उसका भी सार यह सुननेवाले दुर्लभ हैं। कहो, समझ में आया ?

**विरला झायहि तत्तु** और विरले जीव, उसका ध्यान करते हैं। भगवान आत्मा की ओर का अन्तर में झुकाव (होना) और उस स्वरूप को ध्येय करके उसमें एकाकार विरले होते हैं। समझ में आया? कोई पदवी इन्द्र की मिलना का ध्यान करना, वह या राजपाट मिलना या वे जीव विरल हैं ऐसा यहाँ नहीं कहा है और पुण्य प्राप्त करना, या पुण्य का फल मिलना, वे जीव विरले हैं ऐसा नहीं कहा है। भगवान आत्मा अनन्त गुण का पिण्ड प्रभु है। उसका अन्तर ध्यान करनेवाले जगत् में विरले अर्थात् दुर्लभ हैं।

समझ में आया? शास्त्र के पढ़नेवाले भी बहुत होते हैं, कहनेवाले भी बहुत होते हैं परन्तु भगवान आत्मा पूर्णानन्दस्वरूप अभेद की बात सुननेवाले दुर्लभ और उसका ध्यान करनेवाले तो बहुत दुर्लभ हैं। समझ में आया ?

**विरला झायहि तत्तु** विरला जीव। **धारहि विरला धारहिं तत्तु** धारहि का अर्थ विरले जीव, भगवान आत्मा निर्विकल्प रागरहित चीज है और रागरहित निर्मल परिणति द्वारा वह अनुभव की जा सकती है ऐसा अनुभव होकर धारणा होना, ऐसे (जीव) जगत् में दुर्लभ है। समझ में आया? यह धारणा, हाँ! आहा...हा... ! ऐसे अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा, बाहर की तो बहुत है। भगवान आत्मा शुद्ध चैतन्यप्रभु का अन्दर ध्यान करके यह चीज है ऐसा जिसने अनुभव करके धारण किया है कि चीज यह है और इस धारणा में से बारम्बार स्मृति करके आत्मा का ध्यान करता है – ऐसे जीव जगत में (दुर्लभ हैं)। दिव्यध्वनि में ऐसा आया था। भगवान की दिव्यध्वनि में बारह अंग में ऐसा आया था। विपुलाचल पर्वत पर भगवान की वाणी खिरी, उसमें यह आया था कि यह आत्मा शुद्ध अनन्त आनन्दस्वरूप है। इसका एकाग्र होकर (ध्यान करे) और यह आत्मा ऐसा है, ऐसी धारणा (करने वाले विरले हैं)। समझ में आया?

**विरला जिय तत्तु धारहिं** क्या कहते हैं? दूसरी धारणा करनेवाले तो बहुत होते हैं। शास्त्र की धारणा, बोलचाल की धारणा कहने बोलने की धारणा, इसका यह प्रश्न और इसका यह उत्तर और ऐसी धारणा करनेवाले भी बहुत होते हैं। परन्तु यह भगवान आत्मा, सम्यग्दर्शन-ज्ञान में जो अनुभव में आत्मा पूर्णानन्द आया, अनुभव होकर उसकी धारणा करनेवाले जीव विरले और थोड़े हैं। समझ में आया?

भाई ने इसका अर्थ जरा लिखा है कि आत्मज्ञान का मिलना बड़ा कठिन है, थोड़े ही प्राणी इस अनुपम तत्त्व का लाभ पाते हैं। मनरहित पंचेन्द्रिय तक के प्राणी विचार करने की शक्ति बिना... मनरहित प्राणी हैं, उन्हें विचार करने की शक्ति नहीं है कि मैं कौन हूँ और कहाँ हूँ? संज्ञी पंचेन्द्रियों में नारकी जीव रात-दिन कषाय के कार्यों में लगे रहते हैं। संज्ञी पंचेन्द्रिय कदाचित् मनवाले हुए ऐसा कहते हैं। मनरहित प्राणी को विचार तो है नहीं; मनवाले हुए तो नारकी में उत्पन्न हुआ, नारकी रात-दिन कषाय... कषाय... कषाय... के कार्यों में लगे हैं (उसमें) किन्हीं को आत्मज्ञान होता है। बाकी इससे अनन्त गुने, सम्यक्त्वी की संख्या से अनन्त गुने मिथ्यादृष्टियों की संख्या नारकी में ऐसी है कि उसे आत्मज्ञान क्या है? ऐसा सुना भी नहीं होता।

**पशुओं में भी आत्मज्ञान पाने का साधन अल्प है।** पशु में भी विरल है। **देवों में विषयभोगों की अतितीव्रता है, वैराग्यभाव की दुर्लभता है, किसी को ही आत्मज्ञान होता है। मनुष्यों के लिए साधन सुगम हैं। सार ठीक लिखा है। तो भी आत्मज्ञान होता है। मनुष्यों के लिए साधन सुगम हैं।** सार ठीक लिखा है। तो भी बहुत दुर्लभ है। मनुष्यपने में आत्मज्ञान की सम्यग्दर्शन की, अनुभव की बात सुनना दुर्लभ और प्राप्त करना मनुष्यपने में भी दुर्लभ है। समझ में आया ? कितने ही तो रात-दिन शरीर की क्रिया में तल्लीन रहते हैं कि **उन्हें आत्मा की बात सुनने का अवसर ही नहीं मिलता।** मनुष्यों को... यह मनुष्यों की बात की है। कितने ही ऐसे होते हैं कि **व्यवहार में इतने फंसे होते हैं कि व्यवहार धर्म के ग्रन्थ पढ़ते हैं, सुनते हैं...** अब मनुष्य आये... मनुष्य। धर्म को सुनने के लिए तैयार हुए, सुने परन्तु वे व्यवहार के ग्रन्थों में इतने फँसे कि व्यवहार-धर्म के ग्रन्थों को पढ़ते और सुनते हैं। निश्चय अध्यात्म ग्रन्थ क्या है ? उसे समझने का और सुनने का समय नहीं मिलता।

**मुमुक्षु** - निषेध करनेवाले भी निकले।

**उत्तर** - निषेध करनेवाले (इंकार करे)। नहीं... नहीं... नहीं... यह अध्यात्म नहीं, अध्यात्म नहीं। यह व्यवहार सुनो, व्यवहार पढ़ो। ज्ञानचन्दजी ! ऐसा चलता है न ? भाई ! नहीं... नहीं... नहीं... ।

**अनेक महान विद्वान (पण्डित) बन जाते हैं; न्याय, व्याकरण, काव्य, पुराण, वैद्यक, ज्योतिष की और पाप-पुण्य का बन्ध करनेवाली क्रियाओं की विशेष चर्चा करते हैं।**

व्याकरण की करे, शब्दकोश की करे, पुण्य – पाप की चर्चा करे। यह पुण्य ऐसा होता है और यह पुण्य ऐसे होता है परन्तु यह बात तो अनन्त बार की, अब सुनना ! नयी बात क्या है, अनन्त काल के जन्म-मरण मिटने की चर्चा नहीं करते, चर्चा करनेवाले नहीं – ऐसा कहते हैं। हैं? अध्यात्म ग्रन्थों का सूक्ष्मदृष्टि से अभ्यास या विचार नहीं करते। विमलचन्दजी! यह ठीक है? ऐ...ई...! राजमलजी! दोनों व्यक्ति... बदले हैं या नहीं? देखा है या नहीं इन्होंने? अध्यात्म ग्रन्थ को पढ़ने का समय भी नहीं। नहीं... नहीं... नहीं... व्यवहार करो... व्यवहार करो... व्यवहार पढ़ो... व्यवहार पढ़ो... यह करते-करते हो जायेगा। (व्यवहार) करते-करते धूल में भी नहीं होगा, सुन न ! भगवान आत्मा अध्यात्म की अन्तर की बातों को समझे बिना, अन्तरदृष्टि किये बिना कल्याण तीन काल में है नहीं। उसका निर्विकल्प पता लिये बिना.... आत्मा वस्तु ही निर्विकल्प है, रागरहित -पुण्यरहित-क्रियारहित-मनरहित-संगरहित ऐसा भगवान आत्मा राग से और विकल्प से असंग ऐसे असंग तत्त्व को अध्यात्मग्रन्थ से सुनकर मनन करनेवाले जीव बहुत दुर्लभ हैं।

आनन्दघनजी भी कहते हैं – अध्यात्मग्रन्थ मनन करो, उनके स्तवन में कहते हैं

अध्यात्म के शास्त्र जो आत्मा को बतलानेवाले हैं, उनका मनन करके अनुभव करना – यह जगत् में मनुष्य में सार है परन्तु कहते हैं कि कितने ही विद्वान् इसमें फँसे हैं कि अध्यात्म की सूक्ष्म दृष्टि से (पढ़ते नहीं हैं) कोई अध्यात्म पढ़े परन्तु सूक्ष्मदृष्टि से उसका अर्थ, भावार्थ क्या है, उसे नहीं समझते हैं।

**मुमुक्षु–** व्यवहार धर्म से हो....

**उत्तर –** हाँ, यह लिखा, समयसार में लिखा, लो ! गोम्मटसार में ऐसा लिखा –

ज्ञानावरणीय से ज्ञान रुकता है। समयसार में ऐसा लिखा कि कर्म के कारण विकार होता है, आत्मा के कारण नहीं। कर्म विपाकी.... कर्म का विपाक, वह राग, देखो! इसमें लिखा है। कर्म का विपाक, वह राग... परन्तु वह किस अपेक्षा से? भगवान आत्मा का पाक, वह राग नहीं। भगवान आत्मा.... ! उसे बताने को ऐसा कहा कि कर्म का पाक, वह राग। (तो कहते हैं) – देखो ! कर्म के कारण राग होता है या नहीं? देखो! अध्यात्म ग्रन्थ निकाले (और कहे) कर्म के कारण राग होता है, उसमें से निकाले कि ज्ञानावरणीय के कारण ज्ञान रुक जाता है अर्थात्

व्यवहार ग्रन्थ में से भी यह निकाला और परमार्थ ग्रन्थ में से भी यह निकाला। आहा...हा...! समझ में आया ? यह पुण्य-पाप अधिकार में लिखा है। लो! यह बड़ी चर्चा आयी है। **सम्मतपडिणिबध्धं मिच्छतं जिणवरेहि परिकहियं** (161 वीं गाथा है)। है न? मिथ्यात्व के उदय से आत्मा मिथ्यात्व को पाता है, समकित का नाश करता है। अरे..! वहाँ किस अपेक्षा से बात है? भाई! आत्मा का शुद्ध आनन्द स्वभाव में विकारी परिणाम (हों), वह तो कर्म के संग से हुआ विकार है; वह आत्मा का स्वभाव नहीं है - यह बतलाने के लिए ऐसा कहा है। कर्म के कारण विकार हुआ है- ऐसा वहाँ नहीं बताना है। विकार अपने स्वभाव से नहीं होता।

भगवान आत्मा, जिसकी गाँठ में तो अकेली वीतरागता पड़ी है। आहा...हा..! जिसकी गठरी में अकेले वीतरागता के रत्न पड़े हैं। उनमें कोई राग-द्वेष, पुण्य-पाप नहीं पड़े हैं। वह तो एक समय की दशा में कर्म के लक्ष्य से उत्पन्न किया कार्य है, वह आत्मा का नहीं है - ऐसा बतलाने के लिए अध्यात्म ग्रन्थ में (विकार) **कर्म का कार्य है**-

ऐसा कहा है, व्यवहार के ग्रन्थ में ऐसा आता है कि आठ कर्म के कारण होता है। इसमें ऐसा आता है कि कर्म के कारण राग होता है; इसलिए दोनों समान दोनों में है।

कहते हैं - सूक्ष्म दृष्टि से नहीं पढ़ते। उसमें कहने का तात्पर्य क्या है - यह विचार नहीं करते। निश्चयनय से अपना ही आत्मा आराध्यदेव है ऐसा दृढ़ निश्चय नहीं कर सकते। आराध्य अर्थात् सेवन करने योग्य तो भगवान यह आत्मा है। परमेश्वर वीतरागदेव, वे व्यवहार आराध्य है। समझ में आया ? यह प्रभु आत्मा, यह शुद्ध चिदानन्द की मूर्ति - यही सेवन करने योग्य, आराधन करने योग्य, आराधने के योग्य एक ही है। ऐसा दृढ़ निश्चय, अकेले व्यवहार के शास्त्र पढ़कर अथवा अध्यात्म शास्त्र भी पढ़कर सूक्ष्म दृष्टि से यह सार निकालना चाहिए - वह सार नहीं निकालते।

**साभार : योगसार ग्रंथ गाथा नं. 66 के प्रवचन से लिया गया अंश**

विद्वान कक्ष

# पं. फूलचन्द शास्त्री सिद्धान्ताचार्य

## प्रकाण्ड जैन विद्वान् : एक स्वतंत्रता सेनानी

पं. नमन जैन शास्त्री, हटा

जैन साहित्य का अद्वितीय एवं अभूतपूर्व कार्य करने वाले पं. फूलचंदजी सिद्धांताचार्य का जन्म ललितपुर से 16 कि.मी दूर सिलावन नामक गाँव के बहुत ही सामान्य परिवार में हुआ था। आपके गाँव में पाठशाला नहीं थी; परंतु पढ़ने में तीव्र रूचि होने से ढाई किलोमीटर दूर दो नदी को पार करके साधूमल गाँव में अध्ययन करने जाया करते थे।

तत्पश्चात् आपने कुछ संग-साथियों को इंदौर जाते देखा, तब आपका भी मन हो गया कि वहाँ जाकर छात्रावास में अध्ययन करूँ; परंतु आपको पिताजी की स्वीकृति नहीं मिली; अतः नहीं जा पाए। तब आपकी पढ़ाई के प्रति तीव्र रुचि ने पिताजी को मना लिया और डेढ़ महीने बाद **इंदौर के उदासीन आश्रम में पंडित वंशीधरजी न्यायालंकार, पंडित मनोहरलालजी आदि विद्वानों से संस्कृत, छहढ़ाला आदि विषयों का गहन अध्ययन किया यहाँ एक वर्ष तक रहे।** पश्चात् पुनः अपने गाँव लौट आए। तत्पश्चात् आपने मुरैना, बीना, खुरई, बनारस, खजुरिया आदि अनेक स्थानों पर विभिन्न स्तर का अध्ययन किया।

इसप्रकार अध्ययन के प्रति आपकी तीव्र रुचि ने अनेक विकट परिस्थितियों में भी अध्ययन के क्षेत्र में दक्षता दिलाई। इसके फलस्वरूप **आपने जैनागम के महान धवला, जयधवला आदि अनेकों ग्रंथों का अनुवाद, संपादन, लेखन किया। आपका स्वभाव सरल, दयालु, निर्भीक था। इसी निर्भीकता के कारण आपने देश की स्वतंत्रता में भी अपना योगदान दिया।**

जब आप 20 वर्ष के थे, तब 1920 में गांधीजी ने आपके सिलावन गाँव में एक अधिवेशन किया था। उससे प्रभावित होकर आपने अपने अध्यापकों के मना करने पर भी जनता की सेवा के लिए **एक मुट्ठी** फण्ड खोला। जिससे आप गरीब परिवारों की सहायता करते थे।

जब आप 1928 में सिलावन से सपरिवार बीना में रहने लगे तब वहाँ कांग्रेस का अधिवेशन हुआ था। जिसमें देशी वस्त्र के प्रचार प्रसार की अनेक योजनाएँ बनाई गई। इससे प्रभावित होकर आपने मंदिरजी में खादी वस्त्र रखवा दिए, जो भी दूसरे लोग अन्य वस्त्र पहन कर यहाँ आएँ, वे यहाँ रखे हुए खादी वस्त्रों को पहनकर जाएँ। इसप्रकार आपने देशी वस्त्र की योजना को कार्यान्वित किया। आप भी खादी वस्त्रों को ही पहना करते थे।

आप सामाजिक कार्यों में अत्यधिक सक्रिय थे। आपने **परवार और समैया समाज में फैले हुए परस्पर विरोध का शमन करवाया।** जब समाज शीतलप्रसादजी का विरोध कर रही थी. तब आप उनके साथ खड़े रहे और विरोध के होने पर भी आपने समाज में उनका प्रवचन करवाया।

बीना से आप नातेपुते (सोलापुर) गए। वहाँ कांग्रेस के सदस्य बने, उनके अधिवेशनों में बढ़ चढ़कर भाग लिया करते थे। यहाँ ही आपने **शांति सिन्धु** नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन किया। **इसमें सन् 1936–37 में व्यवहारवादी व अध्यात्मवादी में जो विरोध चल रहा था, उसके समाधानार्थ अनेक लेख भी लिखे।**

यहाँ 6 वर्ष रहने के पश्चात् घूमते हुए पुनः बीना पहुँचे। वहाँ आपको समाचार मिला कि आपके साले गोकुलनंदजी लड़वाडी में सत्याग्रह कर रहे हैं; यह सुन आप भी उसमें शामिल होने चल दिए। तभी गोकुलनंदजी को पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया ललितपुर में कोर्ट में सुनवाई हो रही थी, उसे सुनने आप भी गए। **कोर्ट में पहुँचते ही पुलिस ने आपको भी गिरफ्तार कर लिया। आपको 1 महीने की जेल और 100 रूपयों का जुर्माना लगाया;** परंतु आपके पास जुर्माना नहीं था; इसलिए ३ महीने की जेल हो गई। बाद में जुर्माना आने से बची हुई 1 माह 11 दिन की जेल झांसी में हुई।

वहाँ भोजन में दूध–दलिया दिया जाता था; परंतु दूध में मिलावट होने के कारण आप उसे नहीं खाते थे। जिसके कारण आपका स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। यह देख एक कैदी का हृदय करुणा से भर गया और वह किसी प्रकार जेल से बाहर आकर एक अफसर के घर से करेले की सब्जी और दो रोटी लाया; परंतु आपने उसे नहीं खाया और कहा कि इसे तुम बहुत श्रम से लाए हो, इसलिए तुम ही खाओ। यह सुन वह रोने लगा और अंत में दोनों ने मिलकर भोजन करते हुए आपने कहा कि इन चार दीवारी में तो हम दोनों भाई–भाई हैं, इसलिए खा लिया। इसके बाहर में जैनी और तुम नाई, तब नहीं खाऊगाँ।

यहाँ से निकलकर ऐसे ही अनेक संघर्षों का आपने डटकर सामना किया तथा अपने देश के प्रति कर्तव्यनिष्ठ होने का परिचय दिया।

इसप्रकार आपके जीवन के दो प्रमुख पक्ष देखने में आए। एक तो आपने स्वरूचि के अनुसार अनेक बाधाओं के उपस्थित होने पर भी अध्ययन के क्षेत्र में प्रकाण्ड पाण्डित्व प्राप्त किया और दूसरा देश व समाज के प्रति अपने कर्तव्यों का स्वशक्ति अनुसार पूर्ण निर्वहन किया। इसप्रकार आप विद्वत् वर्ग के लिए एक आदर्श स्थापित हुए जिसका जैन समाज को बड़ा गर्व रहेगा।

आचार्य परिचय

# आचार्य श्री प्रौष्ठिल अपरनाम चन्द्रगुप्त प्रथम

भारतीय इतिहास के प्रकाशस्तंभ रूप मौर्यवंश के प्रथम सम्राट चन्द्रगुप्त (चन्द्रसे रक्षित) को ही माना जाता है। आपके कौटुम्बीक जन, माता-पिता आदिके विषयमें विशेष जानकारी ज्ञात नहीं हुई है, फिर भी आप बचपन से ही खेल खेल में अन्य बच्चों के साथ स्वयं राजा बन अन्य बालकोंको उसका अनुचर बनाना, न्याय करना आदि खेल खेलते थे। इससे इतना स्पष्ट है, कि आप शत्रुओं को नष्ट करने में पटु वीर योद्धा थे। आप मोरिय वंश के होने से **चन्द्रगुप्त मौर्य** कहलाये। ये क्षत्रिय कुल के थे, परंतु साथ में उनका जैन मतानुयायी होना भी इतिहास से प्रतीत होता है।

आप चाणक्य की मदद से पाटलिपुत्र (हाल पटना) के पूर्व उत्तरवर्ती सीमान्त प्रदेशों से लगाकर अवन्तिपुर (हाल उज्जैन) तक फैले मगधराज्य के सम्राट बने थे। आपका शासनकाल बहुत ही ऐतिहासिक महत्त्व रखता था। आपने आपके समयमें वर्तमान **एशिया** के कई इलाकों के साथ व **यूनान** आदि देशों के साथ भी संधि व्यापार चलाया था। आपने सम्राट सिकन्दर जैसों के हृदय को झकझोर देनेवाले लडाकू राजा पुरु आदि के साथ मित्रता की थी।

इतना होनेके बावजूद भी जिनागम **तिलोयपण्णत्ति** अनुसार जिन्होंने जिनेन्द्र भगवती मुनिदीक्षा धारण की, ऐसे आप अन्तिम मुकुटधारी राजा थे। आपके बाद कोई भी मुकुटधारी राजा दीक्षित नहीं हुए।

आपके समय में इस हुण्डावसर्पिणीकाल के पञ्चम श्रुतकेवली भद्रबाहु स्वामी (प्रथम) उज्जैनी नगरी में पधारे थे। वे आहार लेने नगर में पधारे, उस समय एक सूने घर में मात्र कुछ दिनों के बच्चे की अवाज व करतूतों से अपने अष्टांग निमित्तज्ञान द्वारा भगवान भद्रबाहु स्वामी (प्रथम) ने जाना, कि उत्तर भारत में 12 वर्ष का भीषण अकाल पड़ेगा, जिससे सारे मगध में कहीं भी मुनिचर्या यथायोग्य नहीं चल सकेगी। अतः भद्रबाहुस्वामी अपने 12500 मुनिराजो के संघ सहित दक्षिण के समुद्रतटीय इलाकों की ओर विहार कर गये।

उस समय सम्राट चन्द्रगुप्त भी भविष्यकी ऐसी दुर्दशा देख अत्यंत वैरागी हो, आचार्यदेव भद्रबाहु से भगवती जिनदीक्षा ( दीक्षा नाम प्रौष्टिल) धारण करके, अपने गुरु भगवान के साथ ही दक्षिण पथ की ओर विहार कर गये। रास्ते की गहन अटवी में आकाशवाणी के आधार पर भद्रबाहु स्वामी ने अपनी आयु अल्प जान विशाखाचार्य को संघ का भार सोपकर उन्हें आगे दक्षिण देश जाने का आदेश दिया। उस समय मुनिराज चन्द्रगुप्त अपने गुरु की सेवा में वहीं रहे।

वे जिस अटवीमें थे, वहाँ आहार की विधि मिलना अत्यंत कठिन था। इतिहासकारों के अनुसार उस समय उस भयानक अटवी के व्यंतर देवताने प्रौष्टिल-चन्द्रगुप्त मुनि के तपश्चर्या की कई परीक्षाएँ की जिससे कई दिनों तक आपको आहार

का योग नहीं हुआ, फिर भी आप शान्तभावसे अपने आत्मध्यान-स्वाध्याय में लीन रहे व अपने गुरु की यथायोग्य वैयावृत्त्य करते रहे। आखिर एक दिन आपको आहार का योग मिल गया। तत्पश्चात् आचार्य श्री भद्रबाहुस्वामी (प्रथम) ने वहीं समाधि-मरण लिया। आप उनके चरण-चिह्न को आदर्श बनाकर वहीं महान तपश्चर्या करते रहे।

इतने में दुष्काल के 12 वर्ष पूर्ण हुए। विशाखाचार्य को ससंघ वापस पाटलीपुत्रकी ओर जाते समय, मार्ग में चन्द्रगुप्त मुनिराज मिले। मुनिराज चन्द्रगुप्तने आचार्यदेवकी यथायोग्य वंदना आदि की, परंतु विशाखाचार्य व संघके मुनिपुंगव चन्द्रगुप्त को ऐसे भयानक जंगल में 12 वर्ष तक रहकर साधना व महाव्रतों का पालन असम्भव समझ उनको भ्रष्ट मुनि समझ बैठे।

तत्पश्चात् मुनिराज चन्द्रगुप्त को ज्ञात हुआ, कि जहाँ अटवी में आहार का योग हुआ था, वह जिनमन्दिरों, श्रावक-श्राविकाओं से सुशोभित नगरी नहीं, परंतु मात्र व्यंतरदेवकृत रचना थी, कि जो आपकी तपश्चर्या से प्रसन्न होकर व्यंतरदेव ने रची थी।

परंतु देव-रचना अर्थात् देवकृत आहार लेने से आपने स्वयं ही आचार्यवर विशाखाचार्य से आलोचना कर केशलोच आदि द्वारा नवीन दीक्षा धारण की। उन्होंने भद्रबाहुस्वामी के देहपरिवर्तन करने के पश्चात् करीब १२ वर्ष तक निरन्तर तपश्चर्या करते हुए अन्त में वहीं समाधिमरण अंगीकार किया। यह स्थान कोई और नहीं, पर वर्तमान श्रवणबेलगोला ही है, जो उस समय भयानक अटवी था। वह जगह आज भी आचार्य भद्रबाहु (प्रथम) व मुनिराज चन्द्रगुप्त (प्रथम) की समाधिस्थल के रूप में प्रसिद्ध है।

आपके समय में कोई लिखित ग्रंथ रचना नहीं होती थी, इसलिए आपने कोई ग्रंथ रचना नहीं की। फिर भी आपकी महान तपश्चर्या व अकेले (अटूले) भयंकर वन में 12 वर्ष से भी अधिक काल तक गुरुभक्ति में संलग्नता ही हम सबके लिये एक अनुकरणीय आदर्श है।

**आपका दीक्षा नाम प्रौष्ठिल व राज्यशासन का चन्द्रगुप्त नाम ऐसा प्रतीत होता है।**

आपका काल ई. सन् पूर्व 355- 336 के बीच माना जाता है। कुछ लोगों की मान्यता ऐसी है, कि आप ही भगवान भद्रबाहु (प्रथम) के शिष्य विशाखाचार्य थे, परन्तु आपका जंगलमें गुरु-भक्तिसह रहना और ससंघ दक्षिण-पथ की ओर जाना, दोनों का सुमेल नहीं होने से आप स्वयं विशाखाचार्य नहीं होंगे ऐसा भी इतिहासकारों का मानना है। जो कुछ भी हो आप एक महान गुरु भक्त व हमारे लिए परम आदर्श तपस्वी थे, इसमें कोई विकल्प नहीं है।

महान गुरुभक्त प्रौष्टिल आचार्यदेवको कोटि कोटि वंदन।

**साभार : भगवान महावीर एवं उनकी आचार्य परम्परा**

# शिक्षाप्रद कहानी : अकृतपुण्य बना धन्यकुमार

भोगवती नाम की एक नगरी थी। नगरी का नाम जितना शुभ था, वह बालक उतना ही अशुभ था। उसके पैदा होते ही उसके पिता चल बसे। घर की सारी सम्पदा नष्ट हो गयी। अत्यन्त दरिद्रता के कारण उसकी माँ को वह गाँव छोड़कर जाना पड़ा। माँ ने विचार किया कि वह अपने गाँव में तो कोई छोटा काम कर नहीं सकती, क्योंकि इससे उसकी प्रतिष्ठा तथा कुल की गरिमा एवं नाम मिट्टी में मिल जाता। वह धन-सम्पदा को तो बचा नहीं सकी, कम-से-कम मानप्रतिष्ठा ही बचा ले। इसलिए वह दूसरे गाँव में जाकर एक सेठ के यहाँ रसोई बनाने का काम करके अपनी जीविका चलाने लगी और पुत्र का भी पालन करने लगी।

एक दिन की बात है, जब बालक की माँ ने रसोई में सेठ और उनके सात पुत्रों के लिए भोजन में खीर बनायी, तब तो बड़ा ही गजब हो गया। जब सातों बच्चे मजे से खीर खा रहे थे, तब वह अभागा बालक उन बच्चों को लालचभरी नजरों से खीर खाते हुए देख रहा था। सेठ के बच्चों को यह अच्छा नहीं लगा कि उन्हें कोई खाते हुए इस तरह देखे, कहीं उसकी खाने में नजर लग गयी तो क्या हो ? अतः वे उसे गुस्से से देखने लगे तथा उसे वहाँ से चले जाने के लिए कहने लगे। जब वह न माना तो वे सातों बच्चे अचानक उठ खड़े हुए और उस बालक को लातघूँसे से मारने लगे। उन बच्चों ने उसे मार-मार कर अधमरा कर दिया तथा बड़ी मुश्किल से उन्हें रोका जा सका।

सेठ को इस घटना की जानकारी मिली तो उन्हें उस बालक के प्रति बहुत दया उत्पन्न हुई। उन्होंने अपने बच्चों के कृत्य पर दुःख प्रकट करते हुए उसकी माँ को खीर बनाने की सारी सामग्री देकर अपने घर में खीर बनाकर अपने बालक को खिलाने के लिए कहा। बालक की माँ ने अपने घर में बड़ी ही स्वादिष्ट खीर बनायी। बालक बड़ा खुश था कि आज उसे खीर खाने मिलेगी।

खीर बनाने के बाद माँ ने उस बालक से कहा कि बेटा ! हमने आज तक कोई पुण्य के काम नहीं किये हैं, तभी तो ऐसा पाप फलित हुआ है। तुम्हारे पिताजी नहीं रहे, धन-सम्पदा नष्ट हो गयी, हम बेघर हो गये और तुम्हारे साथ ऐसा दुर्व्यवहार हुआ और इसलिए ही लोग तुम्हें **अकृतपुण्य** के नाम से बुलाते हैं। इसका मतलब है- अभागा, भाग्यहीन या पुण्यहीन । अतः हमें कोई पुण्य का काम करना चाहिए, क्योंकि पुण्य के उदय को ही भाग्य कहते हैं। हम अपना भाग्य अपने सद्कर्मों से बदल सकते हैं। मेरा मन हो रहा है कि आज हम यह खीर पहले मुनिराज को आहार के रूप में प्रदान करें, फिर बची हुई खीर हम खायें। माँ की बात सुनकर बालक भी प्रसन्नतापूर्वक आहारदान के लिए तैयार हो गया।

माँ ने बालक से कहा- मैं कुएँ से एक घड़ा पानी भरकर लाती हूँ, तब तक तुम घर के दरवाजे पर ही खड़े रहना तथा देखना कि कोई मुनिराज आहार के लिए आ रहे होंगे। ध्यान रखना कि आज हमें मुनिराज को खीर का आहार कराना है, अतः कहीं मुनिराज यहाँ से आगे न निकल जायें। माँ का आदेश पाकर बालक प्रमाद छोड़कर उत्साहपूर्वक **अतिथि- प्रेक्षण** करने लगा। तभी उसे दूर, बहुत दूर मुनिराज आते हुए दिखायी दिये। उसकी प्रसन्नता का ठिकाना न रहा। धीरे- धीरे मुनिराज उसी ओर चले आ रहे थे। नग्न दिगम्बर, सौम्य मुद्राधारी, जिनके पास केवल पिछी और कमण्डल था।

चार हाथ आगे की जमीन देखते हुए, आँकड़ी बाँधे हुए आहार के लिए ही गाँव में चले आ रहे थे। बालक मुनिराज की मुद्रा को देख-देखकर फूला नहीं समा रहा था।

परन्तु यह क्या हुआ? मुनिराज तो बालक के घर से आगे बढ़ने लगे। बालक मुनिराज की ओर दौड़ा, उसने मुनिराज के पैर पकड़ लिये। वह कहने लगा कि मेरी माँ ने मुझे आदेश दिया है कि आज मुनिराज को आहार कराना है, कृपया आप आहार करके ही जायें। परन्तु मुनिराज तो विधिपूर्वक पड़गाहन करने पर अन्तराय-रहित ही आहारग्रहण करते हैं, अतः बालक के आग्रह मात्र से तो आहार नहीं कर सकते थे। साथ ही बालक पैर पकड़े हुए था, अतः जबरन आगे भी नहीं बढ़ सकते थे। यदि बालक की माँ घड़ा भरकर नहीं आ गयी होती तो मुनिराज अन्तराय का विचारकर आहार किये बिना ही लौट जाते। परन्तु माँ ने वही पानी भरा घड़ा हाथ में लेकर मुनिराज का पड़गाहन करना प्रारम्भ कर दिया।

माँ बोल उठी हे स्वामी! नमोऽस्तु, नमोऽस्तु, नमोऽस्तु, अत्र, अत्र, अत्र, तिष्ठ, तिष्ठ, तिष्ठ। हे स्वामी! मनशुद्धि, वचनशुद्धि, कायशुद्धि, आहार-जल शुद्ध है, भोजनशाला में प्रवेश कीजिए- इत्यादि प्रकार से नवधा भक्ति पूर्वक खीर का आहार कराया गया। आहार निर्विघ्न सम्पन्न हुआ। बालक तो खीर खाने के बारे में भूल ही गया। आहार कराते समय वह अपार प्रसन्न हुआ। उसने अपने पूर्वबद्ध पापों को क्षीण कर दिया। अपार पुण्य का संचय किया।

निरन्तराय आहार सम्पन्न होने के उपरान्त जब मुनिराज घर से निकलकर किसी योग्य स्थान पर बैठ गये, तब बालक की माँ ने मुनिराज से पूछा- हे मुनिवर! मेरा पुत्र इतना भाग्यहीन क्यों हुआ? इसने पूर्व में ऐसा कौन-सा पाप किया था? माँ का प्रश्न सुनकर मुनिराज अपने अवधिज्ञानरूपी नेत्रों से देखकर कहने लगे कि यह पूर्व भव में एक ब्राह्मण था। इसका एक धर्मात्मा मित्र था। वह प्रतिदिन तिथि के अनुसार नियमपूर्वक जिनमन्दिर में स्वर्णमुद्राएँ चढ़ाता था। एक बार उसे व्यापार के लिए अन्य देश जाना पड़ा तो वह अपने मित्र ब्राह्मण को गिनकर निश्चित स्वर्णमुद्राएँ दे गया और उसे कह गया कि इन्हें तिथि के अनुसार जिनमन्दिर में चढ़ाते रहना, जिससे मेरा नियम टूटे नहीं। ब्राह्मण ने मित्र से स्वर्णमुद्राएँ ले लीं और मित्र की अनुपस्थिति में वे मुद्राएँ नियमितरूप से मन्दिर में चढ़ाने लगा, परन्तु एक बार उसके मन में लालच जागृत हो गया।

वह सोचने लगा कि यदि वह किसी दिन स्वर्णमुद्राएँ नहीं चढ़ायेगा तो किसे पता चलेगा? और उसने मन्दिर में स्वर्णमुद्राएँ चढ़ाना बंद कर दिया तथा उन स्वर्णमुद्राओं को अपने भोग के कार्यों तथा जुआ आदि सप्त व्यसनों में लगाकर पाप का संचय करने लगा। उसने देवद्रव्य या निर्माल्य का सेवन कर अत्यन्त पाप का संचय किया और वहाँ से मरकर यह अकृतपुण्य नामक बालक हुआ है तथा इस भव में अपने पूर्व में किये गये पापों का फल भोग रहा है।

परन्तु आज इस अकृतपुण्य ने अपार पुण्य का संचय किया है। यह अगले भव में महान पुण्यशाली धन्यकुमार नामक महापुरुष होगा तथा यह निकट भव्य है, अतः आगामी भवों में सिद्ध अवस्था को प्राप्त करेगा। इतना कहकर अकृतपुण्य को धर्मवृद्धि का आशीर्वचन प्रदान करते हुए वे अन्यत्र विहार कर गये। अकृतपुण्य अपनी आयु पूर्ण करके अगले भव में महान पुण्यशाली धन्यकुमार सेठ हुआ और महान पुण्य का फल भोगता हुआ, अन्त में दिगम्बरी दीक्षा लेकर सर्वार्थसिद्धि प्राप्त की और अगले भव में मोक्ष प्राप्त करेगा।

**साभार : कथा बत्तीसी, पं. अशोक जी शास्त्री, इन्दौर**

## आलेख कक्ष

# वीर शासन जयंती

जैनधर्म में वस्तु स्वातन्त्र एवं यथार्थ वस्तु निरुपण पर विशेष महत्व दिया गया है अगर इस महत्व के यथार्थ स्तम्भ को देखें तो मूल में वीतरागी देव की पवित्र एवं निर्मल वाणी दिखाई पड़ती है। पर इसी वाणी का तीर्थंकर भगवान महावीर के केवलज्ञान प्रकट होने के बावजूद भी दिव्यध्वनि रूप में नहीं खिरना, भव्य जीवों के लिए चिंतन का विषय हो गया।

दिव्यध्वनि नहीं खिरने पर भी प्रायः अन्य जीवों ने समवशरण में बैठकर, प्रभु की वाणी का इंतजार किया, परन्तु जब अमृत धारा की वर्षा नहीं हुई तो अपने को अभागा समझकर कुछ चले गये; कुछ टकटकी लगाये बैठे रहे।

यहाँ मेरा प्रश्न है? जब निरक्षरी-ॐकारमयी दिव्यध्वनि नहीं खिरी तो वहाँ उपस्थित अवधिज्ञानी अथवा ऋद्धिधारी मुनियों ने अपने ज्ञान से इसका कारण क्यों न जान लिया? क्या 66 दिन तक किसी का इस बात पर बल न गया होगा कि आखिर दिव्यध्वनि क्यों नहीं खिर रही है? एवं इसका प्रमुख कारण भी नहीं खोज पाये?

अरे जिनकी सभा में वृहस्पति, देवता भी अपने आप को दास भक्ति से नम्रीभूत पाते हैं और जिस इन्द्र के माध्यम से कुबेर ने क्षण भर में समवशरण की रचना तो कर दी परन्तु एक गणधर का अभाव है यह किसी के ख्याल में आखिर क्यों नहीं आया? आखिर ख्याल आता भी कैसे ? जब काललब्धि न पकी हो, प्रबल निमित्त न मिले हों, स्वभाव की ऐसी योग्यता न हुई हो, भव्य जीवों की ऐसी होनहार न हुई हो तब तत्त्वज्ञान के अभ्यासी को भगवान महावीर की वाणी नहीं खिरने पर आश्चर्य नहीं होवे तो इसमें भी कोई आश्चर्य की बात नहीं है। ६६ दिन के पश्चात् काललब्धि पकी तो क्रमबद्ध में बंधी वीरा की वाणी के खिरने की पयार्य भी उपस्थित हो गईं।

विचार तो कीजिए तीनलोक के नाथ की ॐकारध्वनि को खिरने में गणधर की पराधीनता को स्वीकार करना पड़ा, तब जाकर वाणी खिरी। वास्तव में यही जैन धर्म में वस्तु स्वातन्त्र एवं सहज व्यवस्था दिखाई पड़ता है।

यह सब कार्य अन्ततः उसी जीव के निमित्त से सम्पन्न किया गया जिससे अभी तक 66 दिन तक पुरुषार्थ नहीं दिखाकर वास्तविक पुरुषार्थ का परिचय दिया अन्ततः ये सब इन्द्र के निमित्त गौतम गणधर सहित 500 शिष्यों को जैसे ही समवशरण दीख पड़ा उनके मान गलते देरी न लगी, कुछ ही देर में महामिथ्यात्व से पीड़ित गौतम दीक्षित होकर ज्ञान की किरणों से आच्छादित हो गये।

**ये दिन वैशाख माह के कृष्ण पक्ष का एकम का था।** जो भव्यों के लिए द्वादशांग के समुद्र से भेंट कराने में निमित्त बना। परन्तु विचारणीय तो ये है कि हम इस पर्व को किस दिशा में मोड़ रहे हैं? कहीं ये पर्व मनोरंजनादि का कार्य तो नहीं हो गया?

भगवान महावीर के सिद्धान्तों को हम स्वयं में समा लें तो उनकी खिरी वाणी का खिरना सत्यार्थ होगा, नहीं तो पर्व तो अनेकों है; और ये भी उसी का अंग बना दिया गया तो फिर इस वाणी का क्या महत्व रहेगा।

अतः **वीर की वाणी को अपने हृदयंगम करना ही वास्तविक वीर शासन जयन्ती का मनाना है।**

## आत्म चिंतन का ये समय आया

**आत्म चिंतन का ये समय**
**आत्म चिंतन का ये समय आया,**
**पाके नरतन क्या खोया क्या पाया ।। टेक ।।**
**हम जिसे ज्ञान–ज्ञान कहते हैं ( 2 )**
**मन तो इंद्रियों में ही भरमाया ।। पाके... 1।।**
**देखो पर्यायें तो है क्षणभंगुर (२)**
**फिर भी पर्यायों में ही इतराया ।। पाके... 2।।**
**तू तो टंकोत्कीर्ण ज्ञायक है (2)**
**बस यही तू समझ नहीं पाया ।। पाके... 3 ।।**
**एक क्षण निज में ठहर जाओ (2)**
**बस यही आखिरी समय आया ।।पाके...4।।**

# लेख : अष्टान्हिका महापर्व का परिचय

**कार्तिक फाल्गुन षाढ़ के अन्त आठ दिन मांहि।**
**नंदीश्वर सुर जात है हम पूजें इंहि ठांहि।।**

**यह पर्व, कार्तिक, फाल्गुन और आषाढ माह के अन्त के आठ दिनों तक (शुक्लपक्ष की अष्टमी से, पूर्णिमा तक) मनाया जाता है।** इन आठ दिनों में अष्टम द्वीप नन्दीश्वर में स्थित बावन जिनालयों की पूजा करने, चतुर्निकाय के देव यहाँ आते हैं। चूँकि मनुष्य वहाँ नहीं जा सकते; इसलिए उक्त दिनों में पर्व मनाकर, यहीं पर पूजन करते हैं। इन दिनों में मुख्यरूप से सिद्धचक्र मण्डल विधान का आयोजन किया जाता है। साधुसंघों में नन्दीश्वरभक्ति का पाठ किया जाता है। साधु एवं श्रावकगण इन दिनों यथाशक्ति व्रतउपवास रखते हैं।

यह एक शाश्वत पर्व है इस पर्व पर पूरा विश्व आनन्द और शान्ति का अनुभव करता है। इस पर्व का जैन धर्म में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है जैसा कि अभी स्पष्ट किया कि इस पर्व को मनाने के लिए चतुर्निकाय के देवगण आठवें द्वीप श्री नन्दीश्वर जी जाते है और बड़ी ही भक्ति-भाव के साथ भगवान की पूजा-अर्चना करते है, परन्तु हम मनुष्य तो मात्र ढ़ाई द्वीप तक ही सीमित है, अतः वहाँ जाने की योग्यता न होने पर भी यहीं भगवान का गुणानुवाद करते हैं।

यह नन्दीश्वर द्वीप 163 करोड़ 84 लाख योजन विस्तार वाला है, जिसके प्रत्येक दिशा में13-13 अकृत्रिम जिनचैत्यालय हैं। एक दिशा में एक अंजनगिरी है उसके चारों दिशाओं में 1-1 दधिमुख है, एवं दधिमुख के 2 कोणों पर 1-1 रतिकर पर्वत है, इसप्रकार 13 अकृत्रिम चैत्यालय एक दिशा संबंधी समझना चाहिए। प्रत्येक जिनमंदिर में 108-108 प्रतिमायें 500 धनुष के आकार युक्त पद्मासन में विराजमान होती हैं। जिसे देखकर देव अत्यन्त प्रसन्न होते रहते हैं।

जिनमंदिर में कुल 5616 जिनप्रतिमायें सुशोभित होती हैं। यहाँ देवगण आठ दिन पूरी भक्ति सहित पूजा-अर्चना करते हैं, अतः यह पर्व महापर्व समस्त जीवों का हितकारी और सर्वश्रेष्ठ है।

**साभार : मंगलशासन भाग-1 से कुछ अंश**

# वीर के शासन की देखो कुछ अलग ही बात है...

**कविता कक्ष** कवि :– अरविन्द जैन, खड़ेरी

निज को सन्मुख करके तुमने, कर्म श्रृंखला बिखराई ।
पर 66 दिन तक दिव्य देशना, फिर भी न थी खिर पाई।।

अब खिरी है वाणी ज्यों ही प्रभु की मिट गए सभी आताप हैं।
वीर के शासन की देखो कुछ अलग ही बात है।।

कर्म शत्रु का हृदय चीरकर, परमपने को प्राप्त किया।
लोकालोक को जान लिया, भव–भव का चक्र समाप्त किया।।

भव–भव में दुःख के कारण का, किया जो तुमने घात है।
वीर के शासन की देखो कुछ अलग ही बात है।।

महावीर की वाणी खिरी तब, वीर का शासन चला।
पड़ा सूखा ज्ञान पोखर, आज फिर से था भरा।।

वीर की वाणी अनूठी, देखते ही लुट गई।
तत्त्वश्रवण के काम में थी, प्रजा सारी जुट गई।।

तब धर्मसभा में नहीं दिखती, पंथ अर कोई जात है।
वीर के शासन की देखो कुछ अलग ही बात है।।

## पूर्व प्रतियोगिता के क्रमशः उत्तर

**1.** 150 **2.** 357 **3.** 48 **4.** 51 **5.** 415

**नोट : पूर्व प्रतियोगिता में अनेक लोगों द्वारा उत्तर भेजे गये उनका प्रयास सराहनीय है।**

## ज्ञानवर्धक प्रतियोगिता : खोजोगे तो पाओगे, ज्ञानवान हो जाओगे।

नोट :– इस प्रतियोगिता के माध्यम से 7 आचार्य और 7 ग्रन्थों के नाम खोजिए।

| | | | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| पा | द | ख | चा | नो | य | श | स्ति | लि | क | चं | पू |
| ना | मा | ना | हू | बा | द्र | भ | न्त | म | स | पू | ज्य |
| ग | ता | प | द्म | स | ता | थो | र | चा | ला | मू | पा |
| से | सो | ह | न | जि | वा | णी | मो | का | टी | ग्र | द |
| न | पू | ली | ब | त | भू | ण | भ | द्र | सं | मा | सा |
| स | बो | म | ति | ना | गे | षे | ण | भ | हि | नि | टा |
| शा | फ | न्त | गा | र | कु | वि | चा | म | ता | पा | द |
| नु | ह | स | म | य | सा | र | मि | स | गु | को | स |
| त्या | प्य | वि | सा | ण | ग | न | न्दि | चा | र्य | ना | पि |
| आ | पा | पि | द्या | सा | मि | ग | न | मं | द्यो | मि | गा |
| सु | घ | र | ष | र | म | रो | सु | त्र | मि | ति | र |
| ग | र | त्न | क | र | ण्ड | श्रा | व | का | चा | र | स |

**नोट : निम्न पत्रिका के समाधान अग्रिम पत्रिका में प्रकाशित किये जायेंगे। आप अपने उत्तर तीर्थधाम मंगलायतन के न. पर मेसेज द्वारा प्रेषित कर सकते हैं।**

**मोबाईल नम्बर. – 9997996346 (अभिषेक कुमार जैन)**

**नाम – .....उम्र..... मोबाईल नं.....**

## लेख-लेखन

- विचार करो अगर आप देवगति के जीव होते तो अष्टाह्निका पर्व कैसे मनाते?
- विचार करो अगर आप भगवान महावीर के समवशरण में होते तो दिव्यध्वनि नहीं खिरने पर कैसे परिणाम रखते।

**किसी भी एक विषय पर लेख लिखिए।**

काव्य कक्ष

साभार : भक्तामर स्तोत्र

# भक्तामर स्तोत्र आचार्य मानतुङ्ग द्वारा रचित

**भक्तामर प्रणत मौलि मणि प्रभाणामुद्योतकं दलित पाप–तमो वितानम्।**
**सम्यक् प्रणम्य जिन–पादयुगं युगादावालम्बनं भव–जले पततां जनानाम्।।1।।**

**अन्वय :** भक्तामर प्रणत मौलि मणि प्रभाणाम् उद्योतकम्, पाप तमः वितानं दलितम्। युगादौ भवजले पततां जनानां आलम्बनम्, जिनपादयुगं सम्यक् प्रणम्य।

**शब्दार्थ : भक्त** – भक्त, अमर देवों के प्रणत झुके हुए, मौलि मुकुटों के, **मणि** – मणियों की, **प्रभाणाम्** – प्रभा (कान्ति) को, **उद्योतकम्** – बढ़ाने वाले **पाप –** पाप रूपी, **तमः** – अंधकार के, **वितानम्** – विस्तार के, **दलितम्** – नाशक, **युगादौ** – युग के प्रारंभ में **भवजले** – संसाररूपी समुद्र में, **पतताम्** – गिरते हुए, **जनानाम्** – प्राणियों को, **आलम्बनम्** – सहारा देने वाले, जिन जिनेन्द्र भगवान के, **पादयुगम्** दोनों चरणों को, **सम्यक् –** भली भांति, **प्रणम्य** – नमस्कार करके।

**श्लोकार्थ :** प्रकाशमान मणि–मोतियों से जडित मुकुटों से शोभित देवों के झुके हुए मस्तकों द्वारा पूजित, पापरूपी अंधकार के समूह को नष्ट करनेवाले, संसार–समुद्र में गिरे हुए मनुष्यों को युग के आदि में (कर्मभूमि के आरंभ में) सहारा देनेवाले जिनेन्द्र भगवान! (आदिनाथ) के चरणयुगल को भली–भाँति प्रणाम करके।

**यः संस्तुतः सकल–वाङ्मय तत्त्वबोधादुद्भूत बुद्धि–पटुभिः सुरलोकनाथैः।**
**स्तोत्रैर्–जगत्–त्रितय चित्त हरैरुदारः,स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्।।2।।**

**अन्वय :** यः सकल–वाङ्मय तत्त्व बोधात् उद्भूत बुद्धि–पटुभिः सुरलोकनाथैः जगत्त्रितय चित्तहरैः उदारैः स्तोत्रैः संस्तुतः, तं प्रथमं जिनेन्द्रं किल अहम् अपि स्तोष्ये।

**शब्दार्थ : यः** – जो **सकल–वाङ्मय** – समस्त द्वादशांग के, **तत्त्वबोधात्** – यथार्थ ज्ञान से, **उद्भूत** – उत्पन्न हुई, **बुद्धि–पटुभिः** – विशिष्ट बुद्धि से प्रखर, **सुरलोकनाथैः** – स्वर्ग के नाथ इन्द्र के द्वारा **जगत्त्रितय** – तीनों लोक के प्राणियों के **चित्तहरै** – चित्त को हरण करने वाले, **उदारैः** – उत्कृष्ट (प्रशंसनीय) **स्तोत्रैः** – स्तोत्र द्वारा, **संस्तुतः** – स्तुति किये गये, **तम्** – उन, **प्रथमं जिनेन्द्रम्** – प्रथम जिनेन्द्र (आदिनाथ) की, **अहम्** – मैं, **अपि** – भी, **स्तोष्य** – स्तुति करूंगा।

**श्लोकार्थ :** सम्पूर्ण द्वादशांगरूप जिनवाणी के यथार्थ ज्ञान को जानने से जिनकी बुद्धि अत्यन्त प्रखर हो गई है, ऐसे देवेन्द्रों ने तीन लोक के प्राणियों के चित्त को आनन्दित करने वाले सुन्दर स्तोत्रों द्वारा जिनकी स्तुति की गयी है उन प्रथम जिनेन्द्र भगवान (आदिनाथ) की मैं भी स्तुति करूंगा।

# मिश्र सभ्यता में दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति का वैभव

**मिश्र सभ्यता में दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति का प्रभाव :**

सिन्धु घाटी की सभ्यता के साथ ही मिश्र देश में भी अति प्राचीन सभ्यता की खोज की गयी। यह सभ्यता मिश्र की महान नदी नील नदी के किनारे-किनारे विकसित हुयी थी इतिहासकार पुरातत्वविदों एवं वैज्ञानिकों का मानना है कि इस सभ्यता का काल लगभग 3400 ई.पू. का रहा होगा। यह अतिविकसित सभ्यता मानी जाती है तथा कुछ विद्वान इसका काल 3400 ई. पू. से 1447 ई. पूर्व तक मानते हैं।

इस सभ्यता में रोजीटा के शिलालेख, विशालकाल पिरामिड, भव्य अबूसिम्बल एवं लक्सर के मंदिर, स्फिक्स की मूर्ति (मनुष्य का मुख एवं शेर का शरीर), ममी (अति सुरक्षित मृत देह के बॉक्स) कर्नाक के भव्य मंदिर, लियो पोलिस में **रे** देवता के मंदिर भी विश्व विख्यात है। विद्वानों के मतानुसार (मिश्र में) जो **रो रे होरस** नाम से जो देवता जाने जाते है, वह जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के ही अपरनाम है। मिश्र की प्राचीन मान्यता में दिगम्बरत्व को विशेष आदर मिलता दृष्टव्य होता है। प्राचीन काल में मिश्र में नग्न मूर्तियाँ भी बनाने के उल्लेख प्राप्त हुए हैं।

ऋषभदेव को एशिया के अलग-अलग क्षेत्रों, अलग-अलग नामों से प्रतिस्थापित किया गया था, मध्य ऐशिया वाढगल, जापान में **रोकसेव**, साईप्रस से प्राप्त 12 वी सदी की **अपोलो** की (सूर्य की) मूर्ति पर प्रो. हर्षे ने **रोषेक** पड़ा है। उनके अनुसार **यह रोषेक ऋषभदेव का ही नाम है।** महामानव ऋषभदेव वर्षा के देवता, सूर्य के देवता, कृषि के देवता के रूप में विश्व प्रसिद्ध रहे। अतः मिश्र की प्राचीन सभ्यता में ऋषभदेव का प्रभाव निश्चित रूप से रहा।

प्राचीन काल से ही भारत के अच्छे व्यापारिक संबंध थे इस कारण दोनों देशों के बीच लोगों का आवागमन सहज रूप से होता रहता था। भारत की पूजा पद्धति एवं मूर्ति निर्माण कला से मिश्र के लोग अवश्य प्रभावित रहे होंगे। इस प्रकार तथ्यों के आधार पर यह संकेत तो अवश्य ही मिले हैं कि मिश्र सभ्यता की वास्तुकला पर दिगम्बर जैन श्रमण संस्कृति का प्रभाव रहा है। मिश्र में भारतीय शैली की मूर्तियाँ भी प्राप्त हुई हैं। मिश्र सभ्यता के निवासी जैन धर्म के समान ही ईश्वर ही ईश्वर को जगत का कर्ता नहीं मानते थे, वे पूर्णत: शाकाहारी रहे।

जिस काल में भारत में पत्थर, लकड़ी, हाथी दांत, सोना, तांबा, कांसा की मूर्तियाँ बनायी जाती थी, उसी काल में मिश्र में पत्थर, लकड़ी, हाथी दांत, सोना, तांबा, कांसा की मूर्तियाँ बनाने का उल्लेख प्राप्त होता है।

प्राचीन काल में मिश्र के राजा सूर्यवंशी कहलाते थे, सूर्यवंशी प्राचीन भारतीय कुलों में प्रसिद्ध क्षत्रिय कुल सूर्यवंशी भी माना जाता है, इस वंश के अनेक राजाओं ने जैनधर्म का अवलम्बन लेकर अपना मोक्ष पथ भी प्राप्त किया।

**साभार :– भारतीय इतिहास में श्रमण संस्कृति का योगदान – निर्मल कुमार जैन**

# समाचार दर्शन

## आध्यात्मिक शिक्षण–प्रशिक्षण शिविर ग्वालियर का सानंद समापन।

विश्व धरोहर जैन धर्म के बहुमूल्य अवशेषों की भूमि ग्वालियर नगरी इस वर्ष शिक्षण–प्रशिक्षण शिविर से और अधिक गौरवान्वित हो गई है।

21 मई से प्रारंभ होकर 7 जून 2023 तक इस शिविर के माध्यम से वास्तव में जैनधर्म के बहुमूल्य सिद्धांतो को समझाया गया और विद्यार्थियों को अध्यापन की विशेष पद्धति से भी परिचित कराया।

इस प्रशिक्षण शिविर में बालबोध के प्रशिक्षण में 450 विद्यार्थियों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया, जिसमें समस्त महाविद्यालयों के छात्रों के साथ 18 मंगलार्थी छात्रों ने भी इस शिविर का लाभ लिया। परीक्षा परिणाम में सभी छात्र उत्तीर्ण रहे जिसमें **प्रथम स्थान एनी जैन, हर्ष जैन एवं द्वितीय स्थान अनमोल मांगुलकर तथा तृतीय स्थान मंगलार्थी सोहम जैन** ने प्राप्त किया। मंगलायतन परिवार की ओर से समस्त प्रशिक्षणार्थियों को उनके उज्जवल भविष्य की हार्दिक शुभकामनाएं प्रदान करता है, साथ ही ग्वालियर समिति द्वारा इन महानुभवों का सम्मान किया गया एवं पुरस्कृत करके प्रोत्साहित भी किया गया।

इस शिविर को सफल बनाने के लिए देश के विभिन्न विद्वानों का विशेष समागम प्राप्त हुआ जिसमें बाल ब्रह्मचारी सुमितप्रकाश जी, पंडित अभयकुमार जी देवलाली, डॉ० शांतिकुमार जी पाटील, श्री राजेंद्र जी जबलपुर, पंडित मनीष जी मेरठ एवं पंडित संजय जी जेवर इत्यादि और भी अनेक विद्वानों का समर्पण इस शिविर को सफलता प्रदान करा सका।

## जयपुर यात्रा सानन्द सम्पन्न

24 जून 2023 से 26 जून 2023 तक मंगलार्थियों ने जैन तीर्थक्षेत्रों के दर्शन किए : **जम्बूस्वामी की निर्वाण स्थली मथुरा चौरासी, चूलगिरी, संघी जी (सांगानेर) एवं पंचतीर्थ जिनालय।** जयपुर की मनोहारी स्थली पर भक्ति पूजन सानंद संपन्न की जो वाकई में दर्शनीय दृश्य था। विद्यार्थियों के ज्ञान व वैराग्य की वृद्धि में निमित्त तीर्थक्षेत्र की यात्राएं हमेशा की जानी चाहिए।

# अग्रिम सूचनायें

**दीपावली पर्व के अवसर पर शिविर का आयोजन**

तीर्थधाम मङ्गलायतन– भगवान महावीर के निर्वाणोत्सव के पावन प्रसंग पर प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी श्री कुन्दकुन्द प्रवचन प्रसारण संस्थान, उज्जैन और श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट अलीगढ़ मङ्गलायतन एवं श्री शांतिनाथ अकम्पन कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट हस्तिनापुर के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 11 नवम्बर से 16 नवम्बर 2023 तक आध्यात्मिक शिक्षण शिविर का आयोजन होने जा रहा है। जिसमें आप सभी साधर्मी पधारकर अवश्य धर्मलाभ लेवें।

**तीर्थधाम मङ्गलायतन अलीगढ़ विशेष**

11 नवम्बर से 13 नवम्बर 2023 तक तीर्थधाम मङ्गलायतन में शिविर का आयोजन किया जायेगा और भगवान महावीर का निर्वाण महोत्सव मनाकर चिदायतन के लिए प्रस्थान करेंगे।

**तीर्थधाम चिदायतन हस्तिनापुर विशेष**

ऐतिहासिक अतिशयकारी पौराणिक तीर्थक्षेत्र हस्तिनापुर की पावन धरा पर, श्री शान्तिनाथ–अकंपन कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हस्तिनापुर द्वारा तीर्थधाम चिदायतन का वेदी शिलान्यास महोत्सव 15 नवम्बर से 16 नवम्बर 2023 तक होने जा रहे है। इस भव्य शिलान्यास में पधार कर अपना जीवन धन्य करें।

---

**दशलक्षण महापर्व सूचना**

इस वर्ष 19 सितंबर से 28 सितंबर 2023 तक पर्वाधिराज दशलक्षण महापर्व मनाए जा रहे हैं, जो भी धर्म प्रेमी समाज अपने नगर में ; विद्वानों को आमंत्रित करना चाहती है, उनसे निवेदन है; वह मुझे व्यक्तिगत संपर्क कर लेवे ताकि आपकी यथा योग्य व्यवस्था की जा सके एवं विद्वानों को भी पूर्व सूचित करना होता है अतः आप अविलंब आमंत्रण पत्र भेज देवें।

**संपर्क सूत्र:– पंडित सुधीर जैन शास्त्री, मंगलायतन,**
**मोबाइल नंबर:– 9756633800**
**8279559830**

## षट्खण्डागम ग्रन्थ की वाचना अनवरत प्रवाहित
## दसवीं पुस्तक की वाचना 6 जून 2023 से प्रारंभ

**विद्वत समागम –** आदरणीय बालब्रह्मचारिणी कल्पनाबेन, जयपुर एवं सहयोगी भाई–बहिनों तथा मङ्गलायतन परिवार को भी लाभ प्राप्त होता है।

| | | |
|---|---|---|
| दोपहर | 01.30 से 03.15 तक (प्रतिदिन) | **षट्खण्डागम (धवलाजी)** |
| रात्रि | 07.30 से 08.30 बजे तक | मूलाचार ग्रन्थ का स्वाध्याय |
| | **08.30 से 09.15 बजे तक** | **समयसार ग्रन्थाधिराज के कलशों का व्याकरण के नियमानुसार शुद्ध उच्चारण सहित सामान्यार्थ** |

**नोट –** इस कार्यक्रम में आप **जूम आईडी – 9121984198**

**पासवर्ड –** tm@4321

youtube channel - teerthdham mangalayatan

**के माध्यम से भी शामिल हो सकते है।**

## अगस्त 2023 माह के मुख्य जैन तिथि-पर्व

8 अगस्त – श्रावण कृष्ण अष्टमी
15 अगस्त – चतुर्दशी
18 अगस्त – श्री सुमतिनाथ गर्भ कल्या.
22 अगस्त – श्री नेमिनाथ जन्म तप कल्याणक
23 अगस्त – श्री पार्श्वनाथ मोक्ष कल्याणक
24 अगस्त – अष्टमी
**30 अगस्त – रक्षाबंधन पर्व, चतुर्दशी महापर्व**
31 अगस्त – श्रेयांशनाथ मोक्ष कल्याणक / षोडशकारण व्रत प्रारंभ

## स्वानुभूति दर्शन

**प्रश्न :** – आत्मा का स्वरूप बोलने में जितना सहज लगता है, उतनी सहजता से हमें प्राप्त हो सकता है ?

**समाधान :**– स्वभाव सहज है; परन्तु अनादिसे विभाव में पड़ा हुआ है, इसलिये सहज नहीं दिखता। उसके ज्ञान, आनन्द, अस्तित्व, वस्तुत्व आदि सर्व गुण अनादि अनन्त सहज हैं; वैसे ही वस्तु भी स्वयं सहज है, किसीने बनायी नहीं है। जो स्वभाव हो वह सहज होता है, तथा अपने स्वभाव में जाना वह भी सहज है; परन्तु परपदार्थ को अपना बनाना वह अशक्य है। जड़ और चेतन अपना कार्य भिन्न-भिन्न करते रहते हैं। जड अपना नहीं होता। कहाँ से हो? क्योंकि जड़ और चेतन दोनों जुदे हैं, और जुदे हों वे एक कहाँ से हों? इसप्रकार जड़ अपना नहीं होता। किन्तु चैतन्य को अपने को ग्रहण करके अपनेरूप होना वह सहज है। अपने स्वभावरूपसे परिणमना वह सहज है। जैसे पानी शीतल है उसे शीतलतारूप परिणमना वह सहज है। पानी अग्नि के निमित्त से ऊष्ण हुआ, परन्तु उसका शीतल होना सहज है, क्योंकि वह पानी का स्वभाव होने से अग्नि से पृथक् होने पर शीतल हो ही जाता है, किन्तु पानी को ज्यों का त्यों ऊष्ण रखना वह अशक्य है। उसीप्रकार अनन्तकाल बीता तथापि जीव शरीररूप नहीं हुआ, उसरूप होना अशक्य है, क्योंकि वह परपदार्थ है; उसके साथ रहे तो भी जड़रूप नहीं होता। आत्मा अपनी ओर झुके, ज्ञायक को ग्रहण करे तो अल्पकाल में ही स्वानुभूति एवं केवलज्ञान प्रगट होता है, क्योंकि वह अपना स्वभाव है, उसके लिये अनंतकाल की आवश्यकता नहीं है। परपदार्थों को अपना बनाने में अनंतकाल व्यतीत हुआ, तथापि अपने हुए नहीं। जब कि अपने को ग्रहण करने में अनन्तकाल लगता ही नहीं, असंख्य समय में ही केवलज्ञान की प्राप्ति होती है इसलिये अपने को ग्रहण करना, अपनी प्राप्ति करना वह सहज है।

**श्रीमान सद्धर्मानुरागी बन्धुवर,**

सादर जयजिनेन्द्र एवं शुद्धात्म सत्कार !

आशा है आराधना-प्रभावनापूर्वक आप सकुशल होंगे।

वीतरागी जिनशासन के गौरवमयी परम्परा के सूत्रधार पूज्य गुरुदेव श्री कानजीस्वामी के प्रभावनायोग में निर्मित आपका अपना **तीर्थधाम मङ्गलायतन** बीस वर्षों से, सुचारूप से, अपने लक्ष्य की ओर निरन्तर गतिमान है।

वर्तमान काल की स्थिति को देखते हुए, अब मङ्गलायतन का जीर्णोद्धार एवं अनेक प्रभावना के कार्य, जैसे- भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन, भोजनशाला, मङ्गलायतन पत्रिका प्रकाशन आदि कार्यों को सुचारू रूप से भी व्यवस्था एवं गति प्रदान करना है। यह कार्य आपके सहयोग के बिना, सम्भव नहीं हैं। इसके लिए हमने एक योजना बनायी है, जिसमें आपको एक छोटी राशि प्रतिमाह दानस्वरूप प्रदान करनी होगी। इस योजना का नाम - **मङ्गल वात्सल्य-निधि'** रखा गया है। हम आपको इस महत्त्वपूर्ण योजना में सम्मानित सदस्य के रूप में शामिल करना चाहते है। **मङ्गल वात्सल्य-निधि** में आपको प्रतिमाह कम से कम मात्र एक हजार रुपये दानस्वरूप देने हैं। (सदस्यता फार्म पृष्ठ 34 पर है।)

भारत सरकार ने मङ्गलायतन को किसी भी रूप में दी जानेवाली प्रत्येक दानराशि पर, आयकर अधिनियम की धारा 80-जी के अन्तर्गत छूट प्रदान की है। आप इस महान कार्य में सहभागिता देकर, स्व पर का उपकार करें।

आप इसमें स्वयं एवं अपने परिवारीजन, इष्टमित्र आदि को भी सदस्य बनने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। साथ ही तीर्थधाम मङ्गलायतन द्वारा संचालित होनेवाले कार्यक्रमों में आपकी सहभागिता, हमें प्राप्त होगी।

आप यथाशीघ्र सपरिवार पधारकर यहाँ विराजित जिनबिम्बों के दर्शन करें एवं यहाँ वीतरागमयी वातावरण का लाभ लेवें- ऐसी हमारी भावना है।

हार्दिक धन्यवाद एवं जयजिनेन्द्र सहित

| **अजितप्रसाद जैन** | **स्वप्निल जैन** | **सुधीर शास्त्री** |
|---|---|---|
| अध्यक्ष | महासचिव | निदेशक |

# मङ्गल वात्सल्य-निधि
## सदस्यता फार्म

नाम .....

पता .....

..... पिन कोड .....

मोबाईल..... ई-मेल .....

मैं **मङ्गल वात्सल्य-निधि** योजना की सदस्यता स्वीकार करता हूँ और मैं..... राशि जमा करवाऊँगा/दूँगा।

हस्ताक्षर

### चौथाई ग्रास दान भी अनुकरणीय

**ग्रासस्तदर्धमपि देयमथार्धमेव**
**तस्यापि सन्ततमणुव्रतिना यथर्द्धिः।**
**इच्छानुसाररूपमिह कस्य कदात्र लोके,**
**द्रव्यं भविष्यति सदुत्तमदानहेतुः।।**

**अर्थात् :** गृहस्थियों को अपने धन के अनुसार एक ग्रास अथवा आधा ग्रास अथवा चौथाई ग्रास अवश्य ही दान देना चाहिए। तात्पर्य यह है कि हमें ऐसा नहीं समझना चाहिए कि जब में लखपति या करोड़पति हो जाऊँगा तब दान दूंगा बल्कि जितना धन हमारे पास उसी के अनुसार थोड़ा-बहुत दान अवश्य देना चाहिए।

**आचार्य पद्मनन्दि : पञ्चविंशतिका, श्लोक 230**

**यह राशि आप आप निम्न प्रकार से हमें भेज सकते हैं –**

**1. बैंक द्वारा**

**NAME : SHRI ADINATH KUNDKUND KAHAN DIGMABER JAIN TRUST, ALIGARH**
**BANK NAME : PUNJAB NATIONAL BANK**
**BRANCH : RAILWAY ROAD, ALIGARH**
**A/C NO. : 1825000100065332**
**PAN NO. : AABTA0995P**
**RTGS/NEFT IFSC CODE : PUNB0001000**

UPI
BHIM UPI Payments Accepted at
SHRI ADINATH KUND KUND KAHAN DIGAMBER JAIN TRUST

Account Number : 1825000100065332, IFSC Code: PUNB0001000

**2. Online : //www.mangalayatan.com/online-donation/**
**3. ECS : Auto Form के माध्यम से**

आदरणीय डॉ. शान्तिकुमार जी पाटील के माध्यम से विद्यार्थियों को दिया गया संबोधन।

समस्त मंगलार्थियों ने जयपुर स्थित चूलगिरी तीर्थ स्थित दिगम्बर जैन मंदिर के दर्शन किए।

मंगलार्थियों ने किये सांगानेर दिगम्बर जैन मंदिर के दर्शन

पं. सं. : DELBIL/2001/4685

स्वामी, प्रकाशक एवं मुद्रक स्वप्निल जैन द्वारा **मङ्गलायतन** मुद्रणालय, आगरा रोड, अलीगढ़-202001 छपवाकर, 'विमलांचल', हरिनगर, अलीगढ़-202001 से प्रकाशित। **सम्पादक :** डॉ. जयंतीलाल जैन मङ्गलायतन वि. वि.

If undelivered please return to -

मङ्गलायतन

श्री आदिनाथ-कुन्दकुन्द-कहान दिगम्बर जैन ट्रस्ट, हरिनगर, आगरारोड, अलीगढ़-202001 ( उ.प्र. )

Shri Adinath-Kundkund-Kahan Digamber Jain Trust
Harinagar, Agra Road, Aligarh-202001 (U.P.)

Ph. : 9997996346, 2410010/10; Fax : 2410019/22
info@mangalayatan.com www.mangalayatan.com